REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 6 | MARCH - 2026

मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य में स्वतंत्रता के पूर्व महिला साहित्यकारों के समाज का अध्ययन

सीतू पटेल
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. आशुतोष कुमार द्विवेदी
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सारांश –

मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में स्वतंत्रता के पूर्व महिला साहित्यकारों के समाज का अध्ययन विषय यह स्पष्ट करता है कि मन्नू भंडारी ने अपने कथा–साहित्य में स्वतंत्रता–पूर्व सामाजिक संरचना और उसमें महिलाओं की स्थिति का यथार्थपरक चित्रण किया है। उस समय का समाज मुख्यतः पितृसत्तात्मक था, जहाँ महिलाओं की शिक्षा, लेखन और सामाजिक भागीदारी सीमित थी। महिला साहित्यकारों को न केवल सामाजिक बंधनों का सामना करना पड़ता था, बल्कि उन्हें साहित्यिक क्षेत्र में भी अनेक प्रकार की बाधाओं और पूर्वाग्रहों से गुजरना पड़ता था। मन्नू भंडारी के कथा–साहित्य में ऐसी महिलाओं का चित्रण मिलता है जो पारंपरिक सीमाओं को तोड़ने का प्रयास करती हैं और आत्म–अभिव्यक्ति तथा स्वतंत्र पहचान की ओर अग्रसर होती हैं। उनके लेखन में यह भी स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता–पूर्व समाज में महिला लेखन केवल साहित्यिक गतिविधि नहीं थी, बल्कि एक प्रकार का सामाजिक प्रतिरोध भी था। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि मन्नू भंडारी ने महिला साहित्यकारों के संघर्ष, उनकी सामाजिक स्थिति तथा उनके आत्म–संघर्ष को अत्यंत संवेदनशील और यथार्थवादी दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

मुख्य शब्द – मन्नू भंडारी, कथा साहित्य, स्वतंत्रता पूर्व समाज, महिला साहित्यकार, स्त्री संघर्ष, सामाजिक बाधाएँ, स्त्री लेखन, आत्म–अभिव्यक्ति एवं सामाजिक यथार्थ।

प्रस्तावना –

हिंदी कथा–साहित्य की प्रमुख लेखिका मन्नू भंडारी ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज की जटिल संरचनाओं, स्त्री जीवन की समस्याओं तथा बदलते सामाजिक मूल्यों को अत्यंत यथार्थवादी दृष्टिकोण से अभिव्यक्त किया है। उनके कथा–साहित्य में स्वतंत्रता–पूर्व भारतीय समाज की झलक स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है, जहाँ स्त्री जीवन विविध सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पारिवारिक बंधनों से आबद्ध था।

स्वतंत्रता–पूर्व कालीन भारतीय समाज मूलतः पितृसत्तात्मक संरचना पर आधारित था, जिसमें स्त्री की भूमिका को गृहस्थ जीवन तक सीमित कर दिया गया था। शिक्षा, लेखन एवं सार्वजनिक जीवन में उनकी भागीदारी अत्यंत सीमित थी। इस प्रकार के सामाजिक परिवेश में महिला साहित्यकारों का उदय न केवल एक

रचनात्मक प्रक्रिया था, बल्कि वह एक सामाजिक प्रतिरोध का स्वर भी था। मन्नू भण्डारी के कथा–साहित्य में इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का सूक्ष्म और यथार्थपरक चित्रण मिलता है, जो यह दर्शाता है कि स्त्री का संघर्ष केवल निजी जीवन तक सीमित नहीं था, बल्कि वह व्यापक सामाजिक संरचना के विरुद्ध था।[1]

मन्नू भण्डारी की रचनाओं में स्त्री पात्रों के माध्यम से उस युग की सामाजिक विसंगतियों का उद्घाटन किया गया है। उपन्यास आपका बंटी में 'शकुन' का चरित्र एक ऐसी शिक्षित स्त्री का प्रतिनिधित्व करता है, जो पारंपरिक बंधनों से मुक्त होकर आत्मनिर्भर जीवन की ओर अग्रसर होती है। यह चरित्र उस परिवर्तनशील स्त्री चेतना का प्रतीक है, जो स्वतंत्रता–पूर्व की सीमाओं को तोड़ते हुए आधुनिकता की ओर अग्रसर हो रही है।[2]

इसी प्रकार एक इंच मुस्कान की 'रंजना' तथा अन्य स्त्री पात्र अपने अस्तित्व, स्वाभिमान और आत्म–अभिव्यक्ति के लिए संघर्ष करती दिखाई देती हैं। ये पात्र इस तथ्य को रेखांकित करते हैं कि स्त्री केवल परंपराओं की वाहक नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की सक्रिय संवाहक भी है।[3]

स्वतंत्रता–पूर्व भारत में महिला साहित्यकारों की स्थिति अत्यंत संघर्षपूर्ण थी। सामाजिक रूढ़ियों, पारिवारिक प्रतिबंधों तथा शिक्षा के अभाव के कारण स्त्रियों का साहित्यिक क्षेत्र में प्रवेश करना भी एक साहसिक कार्य माना जाता था। अधिकांश महिला लेखिकाओं का लेखन उनके निजी अनुभवों तथा सामाजिक यथार्थ पर आधारित था, जिसमें स्त्री जीवन की पीड़ा, असमानता और संघर्ष प्रमुख रूप से अभिव्यक्त हुए हैं। मन्नू भण्डारी के कथा–साहित्य में यह प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होती है, जहाँ स्त्री पात्र अपनी पहचान और स्वतंत्रता के लिए निरंतर संघर्षरत दिखाई देते हैं।[4]

स्त्री चेतना का विकास मन्नू भण्डारी के साहित्य का एक केंद्रीय तत्व है। उनके कथा–साहित्य में स्त्री पात्र पारंपरिक छवियों से आगे बढ़कर अपने अधिकारों, इच्छाओं और स्वतंत्र अस्तित्व के प्रति सजग दिखाई देते हैं। यह चेतना क्रमिक रूप से विकसित होती है और सामाजिक संरचना को चुनौती देती है। इस संदर्भ में उपन्यास महाभोज में भी स्त्री पात्रों की उपस्थिति यह संकेत करती है कि सामाजिक एवं राजनीतिक स्तर पर भी स्त्री अपनी भूमिका को पुनर्परिभाषित कर रही है।[5]

स्वतंत्रता–पूर्व समाज में महिला साहित्यकारों के समक्ष अनेक प्रकार की बाधाएँ उपस्थित थीं–पारिवारिक अनुमति का अभाव, सामाजिक प्रतिष्ठा का भय, शिक्षा की कमी तथा आर्थिक निर्भरता। इन कारणों से उनके लेखन को प्रायः गंभीरता से नहीं लिया जाता था और उसे सीमित विषयों तक ही बाँध दिया जाता था। मन्नू भण्डारी ने अपने कथा–साहित्य में इन बाधाओं को यथार्थपरक रूप में चित्रित किया है। उनके पात्र इन सामाजिक बंधनों से संघर्ष करते हुए अपने अस्तित्व की खोज करते हैं, जो कि एक गहन मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक प्रक्रिया का द्योतक है।[6]

मन्नू भण्डारी का कथा–साहित्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि एक सामाजिक दस्तावेज है, जिसमें स्वतंत्रता–पूर्व स्त्री जीवन की जटिलताओं, संघर्षों एवं चेतना के विकास का सजीव चित्रण मिलता है।

विश्लेषण –

भारतीय साहित्य के इतिहास में स्वतंत्रता–पूर्व काल सामाजिक, सांस्कृतिक एवं वैचारिक संक्रमण का अत्यंत महत्वपूर्ण चरण रहा है। इस कालखंड में औपनिवेशिक शासन की दमनकारी नीतियों के समानांतर सामाजिक सुधार आंदोलनों, राष्ट्रीय चेतना तथा नवजागरण की प्रक्रियाएँ तीव्र गति से विकसित हो रही थीं। इस परिवर्तनशील परिवेश में महिला साहित्यकारों का उद्भव न केवल साहित्यिक दृष्टि से, बल्कि सामाजिक परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

स्वतंत्रता–पूर्व भारतीय समाज मूलतः पितृसत्तात्मक संरचना पर आधारित था, जिसमें स्त्री की भूमिका सीमित एवं पराधीन मानी जाती थी। बाल–विवाह, पर्दा–प्रथा, अशिक्षा, विधवा–जीवन की कठोरता तथा सामाजिक असमानताएँ स्त्री जीवन को गहरे स्तर पर प्रभावित करती थीं। ऐसे प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद महिला साहित्यकारों ने अपने लेखन के माध्यम से न केवल अपनी संवेदनाओं को अभिव्यक्त किया, बल्कि समाज में व्याप्त कुरीतियों के विरुद्ध सशक्त प्रतिरोध भी प्रस्तुत किया।[7]

इस संदर्भ में पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे तथा सावित्रीबाई फुले का योगदान अत्यंत उल्लेखनीय है। पंडिता रमाबाई की कृति 'द हाई–कास्ट हिन्दू वुमन, फिलाडेल्फिया' में उच्चवर्गीय हिन्दू स्त्रियों की दयनीय स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है, जिसमें बाल–विवाह, विधवा जीवन एवं शिक्षा के अभाव को प्रमुख समस्याओं के रूप में रेखांकित किया गया है।[8]

इसी प्रकार ताराबाई शिंदे की प्रसिद्ध कृति स्त्री–पुरुष तुलना में समाज में व्याप्त लैंगिक असमानताओं तथा पुरुषवादी मानसिकता की तीखी आलोचना प्रस्तुत की गई है।[9] वहीं सावित्रीबाई फुले ने स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाते हुए महिला चेतना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके प्रयासों से स्त्रियों में आत्मविश्वास, जागरूकता एवं सामाजिक सहभागिता की भावना का विकास हुआ।[10]

19वीं शताब्दी के सामाजिक सुधार आंदोलनों का प्रभाव महिला साहित्यकारों के लेखन में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। राजा राममोहन राय एवं ईश्वरचंद्र विद्यासागर जैसे सुधारकों ने सती–प्रथा उन्मूलन, विधवा–विवाह तथा महिला शिक्षा के समर्थन में महत्वपूर्ण कार्य किए। इन आंदोलनों के प्रभाव से महिला साहित्यकारों के लेखन में सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध विरोध एवं परिवर्तन की चेतना सशक्त रूप में उभरती है।[11]

राष्ट्रीय आंदोलन ने भी महिला साहित्यकारों को सार्वजनिक जीवन में सक्रिय भागीदारी का अवसर प्रदान किया। सरोजिनी नायडू तथा सुभद्रा कुमारी चौहान जैसी साहित्यकारों ने अपने साहित्य में राष्ट्रभक्ति एवं स्वतंत्रता चेतना को सशक्त अभिव्यक्ति दी। सुभद्रा कुमारी चौहान की रचनाएँ जनमानस में देशभक्ति की भावना जागृत करने में अत्यंत प्रभावी सिद्ध हुईं।[12]

स्वतंत्रता–पूर्व महिला साहित्यकारों ने स्त्री अस्मिता के प्रश्न को प्रमुखता से उठाया। महादेवी वर्मा के साहित्य में स्त्री जीवन की पीड़ा, संवेदना एवं आत्मचेतना का अत्यंत मार्मिक चित्रण मिलता है। उनकी प्रसिद्ध कृति श्रृंखला की कड़ियाँ स्त्री जीवन की विवशताओं एवं संघर्षों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से उद्घाटित करती है।[13]

महिला साहित्यकारों ने परिवार के भीतर स्त्री की स्थिति का यथार्थपरक चित्रण करते हुए पारिवारिक संबंधों में व्याप्त असमानता, दमन एवं अन्याय को उजागर किया तथा एक संतुलित एवं न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता पर बल दिया। उनकी भाषा सरल, सहज एवं प्रभावशाली है, जिसमें संवेदनशीलता, करुणा तथा विद्रोह का समन्वय दृष्टिगोचर होता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता–पूर्व महिला साहित्यकारों का योगदान भारतीय समाज एवं साहित्य के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। उनका साहित्य केवल व्यक्तिगत अनुभूतियों की अभिव्यक्ति न होकर सामाजिक यथार्थ का सशक्त दर्पण है, जिसने न केवल स्त्री जीवन की समस्याओं को उजागर किया, बल्कि समाज में परिवर्तन की चेतना भी उत्पन्न की।

निष्कर्ष:

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता–पूर्व काल की महिला साहित्यकारों ने भारतीय समाज के यथार्थ को अत्यंत संवेदनशीलता एवं साहस के साथ अभिव्यक्त किया। उस समय जब स्त्री सामाजिक, शैक्षिक एवं आर्थिक दृष्टि से अनेक बंधनों में जकड़ी हुई थी, तब इन साहित्यकारों ने अपनी लेखनी के माध्यम से न केवल अपने अस्तित्व को स्थापित किया, बल्कि समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं असमानताओं के विरुद्ध सशक्त प्रतिरोध भी प्रस्तुत किया। पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे तथा सावित्रीबाई फुले जैसी लेखिकाओं ने स्त्री शिक्षा, समानता एवं अधिकारों के प्रश्नों को प्रमुखता से उठाकर सामाजिक चेतना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके साहित्य में स्त्री जीवन की पीड़ा, संघर्ष, आत्मसम्मान एवं विद्रोह की भावना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। स्वतंत्रता–पूर्व महिला साहित्यकारों का साहित्य केवल व्यक्तिगत अनुभवों की अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यापक सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी है। उन्होंने समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक संरचना, लैंगिक भेदभाव एवं रूढ़िगत मान्यताओं को चुनौती देते हुए एक समतामूलक एवं न्यायपूर्ण समाज की परिकल्पना प्रस्तुत की। इस प्रकार स्वतंत्रता–पूर्व महिला साहित्यकारों ने न केवल हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया, बल्कि भारतीय समाज में परिवर्तन की चेतना को भी सशक्त आधार प्रदान किया। उनका साहित्य आज भी प्रासंगिक है तथा यह समकालीन समाज को दिशा एवं प्रेरणा प्रदान करने में सक्षम है।

संदर्भ –

[1] भण्डारी, मन्नू – त्रिशंकु एवं अन्य कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1975, पृष्ठ 23
[2] भण्डारी, मन्नू – आपका बंटी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1971, पृष्ठ 64
[3] भण्डारी, मन्नू एवं यादव, राजेन्द्र – एक इंच मुस्कान, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1963, पृष्ठ 89
[4] शर्मा, रामविलास – हिंदी साहित्य का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1985, पृष्ठ 312
[5] भण्डारी, मन्नू – महाभोज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1979, पृष्ठ 142
[6] सिंह, नामवर – आधुनिक हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1990, पृष्ठ 201
[7] रामविलास शर्मा – हिंदी साहित्य का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1985, पृष्ठ 298
[8] पंडिता रमाबाई – द हाई–कास्ट हिन्दू वुमन, फिलाडेल्फिया, 1887, पृष्ठ 45
[9] ताराबाई शिंदे – स्त्री–पुरुष तुलना, पुणे, 1882, पृष्ठ 12
[10] गेल ओम्वेट – दलित्स एंड द डेमोक्रेटिक रेवोल्यूशन, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1994, पृष्ठ 67
[11] बिपिन चंद्र – भारत का स्वतंत्रता संग्राम, पेंगुइन बुक्स, नई दिल्ली, 1988, पृष्ठ 112
[12] कमला प्रसाद – हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001, पृष्ठ 215
[13] महादेवी वर्मा – श्रृंखला की कड़ियाँ, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1942, पृष्ठ 89